वर्तमान समय में जयशंकर प्रसाद जी के नाटकों की प्रासंगिकता

महाराजा अग्रसेन हिमालयन गढवाल विश्वविद्यालय

सहायक प्राध्यापक डॉ.आदित्य कुमार मिश्रा

शोध सार

प्रसाद जी के साहित्य में हम देखते हैं कि उनके अधिकतर नाटक प्रख्यात कथानकों पर आधारित हैं। ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथाओं का मोह प्रसाद जी की कहानियों नाटकों तथा काव्य में देखने को मिलता है। प्रसाद जी की कविता जैसे 'कामायनी' पौराणिक कथानक पर ही आधारित है। इसके साथ ही 'इरावती' अपूर्ण नाटक भी ऐतिहासिकता लिए हुए है। अतीत के भव्य एवं आकर्षक चित्र प्रस्तुत करने में तन्मय प्रसाद जी क्या अपने युग से सर्वथा कटे हुए थे अथवा युगीन समस्याओं के प्रति जागरुक थे? यह प्रश्न साहित्य जगत में विमर्श का विषय रहा है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना यथेष्ट है कि ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथानक लेने भर से कोई साहित्यकार अतीत में ही जीने लग जाए यह आवश्यक नहीं।

विषय वस्तु

जिस काल में साहित्य की रचना प्रसाद जी ने आरंभ की वह काल महानतम उथल पुथल तथा घटनाओं का काल था। सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक परिवर्तन तेजी से हो रहा था। यह परिवर्तन केवल देश के स्तर पर ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर पर भी हो रहा था। हमारा देश ब्रिटेन का एक उपनिवेश था जिसकी शक्ति का आधार शोषण था। इस शोषण तंत्र को बनाए रखने तथा और मजबूत करने के लिए अंग्रेजों ने कई तरह के कुचक्र रचे। जिस समय जयशंकर प्रसाद जी का साहित्य में अविर्भाव हुआ भारत देश एक भौगोलिक पृष्ठभूमि के रूप में उभर रहा था। भारतीयों में भारतीयता के बीज अभी अंकुरित हो रहे थे। इस बीज को रोपने का कार्य आरंभ हुआ था 1885 में कांग्रेस के गठन तथा हिंदी साहित्य में भारतेंदु हरिश्चंद्र के प्रादुर्भाव से। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि

'भारतीयता का बीज'' से आशय यह है कि भारत में प्रादेशिक विभिन्नता जटिल रूप से विद्यमान थी। अभी एक दशक भी नहीं हुआ था, जब खुद भारतीयों ने ही भारत को थाली में सजाकर अंग्रेजों को सौंपा था। ब्रिटिश कंपनी अपने आरंभिक दिनों में जब युद्ध करती तो वह किसी भारतीय से नहीं बल्कि कभी बंगाल से, कभी अवध से, कभी मैसूर से तो कभी मराठों से युद्ध करती थी।कंपनी ने प्लासी का युद्ध तो बिना लड़े ही जीत लिया। इसमें अंग्रेज सिपाही तो मुट्ठी भर ही थे,परन्तु अन्य प्रांत जैसे अवध, पंजाब, गोरखा आदि प्रान्तों के सैनिक अधिक थे। मैसूर मराठों को हराने में अंग्रेजों की मदद करते तो कभी मराठे मैसूर को हराने में अंग्रेजों की मदद करते। जब सिंधिया के किले को अंग्रेजों ने जीता तब अंग्रेजी सेना में कुल 500 अंग्रेज सैनिक ही थे बाकी सैनिक भारतीय थे। 1857 की क्रान्ति में देश के बड़े हिस्से ने भाग ही नहीं लिया। आजादी के बाद भी आर• सी• मजूमदार ने अपनी पुस्तक "द सिपोय म्यूटिनी एंड द रीवाल्ट ऑफ 1857" में 1857 की क्रांति को प्रथम, भारतीय और क्रांति, मानने से इन्कार कर दिया।

देश के शिक्षित वर्ग ने यह महसूस किया की जहाँ एक ओर इतनी विविधता है, वहाँ उत्तर से लेकर दक्षिण तक तथा पूरब से लेकर पश्चिम तक सबको एक सूत्र में पिरोने के लिए भारतीयों में भारतीयता का विकास आवश्यक है। दादाभाई नौरोजी, गोपाल कृष्ण गोखले, व्योमेशचंद्र बनर्जी इत्यादि प्रारंभिक क्रांतिकारियों ने अपनी समस्त ऊर्जा तथा जीवन इसी उद्देश्य हेतु समर्पित कर दिया। ठीक इसी प्रकार की उदात्त भावना लेकर आधुनिक हिंदी साहित्य का भी जन्म हुआ। भारतीय पुरातन साहित्य को प्रकाश में लाने का कार्य भी स्वयं अंग्रेजों द्वारा ही किया गया। भारत की पौराणिक कथाओं, पुराणों,स्मृतियों,वेदों आदि से ऐसी सामग्री प्रस्तुत की गई जिससे यह दिखाया जा सके कि भारतीय समाज और भारतीय लोग ऐतिहासिक काल से ही पिछड़े रहे हैं, शोषित रहे हैं, यहाँ वर्ग संघर्ष की श्रृंखला रही है, यह जाति दूषित और विभाजित रही है। मैक्समूलर जैसे लोग जर्मनी में बैठकर भारतीय समाज पर व्याख्यान देने लगे। पुरातन भारतीय साहित्य के अध्ययन के लिए बंगाल में 1884 में "एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल" की स्थापना की गई। इसका कार्य था स्मृतियों पुराणों आदि साहित्य का अंग्रेजी अनुवाद करना। यह सब कार्य षड्यंत्र का एक भाग था। भारतीयों पर अनेक प्रसंगों तथा मनगढंत व्याख्या द्वारा जातीय हीनता को थोपा गया। यहीं

से कुछ भारतीयों द्वारा गौरवशाली इतिहास प्रस्तुत किया गया। यहाँ भारतीयों में एक आत्मविश्वास का विकास हुआ। महान मौर्यसाम्राज्य, गुप्तसाम्राज्य उसके भी आगे वैदिक युग, उत्तरवैदिक युग आदि गौरवशाली प्राचीन भारतीय इतिहास की खोज हुई और यही जयशंकर प्रसाद जी के कथानकों का विषय बने। अब भारत का भौगोलिक रूप भारतीयों के मन मस्तिष्क में चमक उठा, हीनता की भावना छूट चली। इन्हीं घटनाओं को प्रसाद जी ने अपने कथानकों का आधार बनाया। चंद्रगुप्त नाटक की एक कविता

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती

स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती

अर्मत्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो,

प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो बढ़े चलो!

असंख्य कीर्ति रश्मियां, विकीर्ण दिव्य दाह-सी

सपूत मातृभूमि के, रुको न शूर साहसी॥

अराति सैन्य सिंधु में, सुबाड़वाग्नि से जलो!

प्रवीण हो विजयी बनो, बढ़े चलो बढ़े चलो॥

के द्वारा प्रसाद जी देशवासियों का जागरण करते हैं। ऐतिहासिक होते हुए भी तत्कालीन समय का जागरण गीत बन गया तथा आज भी यह कविता युवाओं को उद्वेलित करती है।

राष्ट्रीय चेतना का परिचय प्रसाद जी के आरंभिक नाटकों में ही मिलने लगता है। "प्रायश्चित" नाटक के द्वारा वे यह कहते हैं कि 'जिस दिन कोई जाति अपने आत्म गौरव का अपने शत्रु से बदला लेना भूल जाती है उसी दिन उसका मरण हो जाता है''।

स्कंदगुप्त तथा चन्द्रगुप्त के कथानक भले ही इतिहास के कथानक हों, परन्तु समकालीन भारत के सामने खड़े साक्षात प्रश्नों को ही उद्वेलित करते हैं। इनके समय में भारत पराधीन था और इनका कारण ही स्वार्थी और राष्ट्रद्रोही

तत्व थे। जिस क्षण भारत में प्रदेश की बजाय देशभर को एक मानने वाले व्यक्ति प्रबल होने लगते हैं, सिकंदर की विजय यात्रा अधूरी रह जाती है, सेल्यूकस की पराजय राष्ट्रीय एकता की विजय बन जाती है। देश के लिए प्राण न्योछावर करने वाले लाला लाजपत राय स्कंदगुप्त की 'पर्णदत्त' तथा 'बंधुवर्मा' आदि के रूप में दिखाई पड़ते हैं।

प्रसाद जी ने जिसप्रकार से गौरवशाली अतीत को कथानक का विषय बनाया उसने एक आलोचना को जन्म दिया। उन पर गड़े मुर्दे उखाड़ने का आरोप लगाया गया।माधुरी में प्रेमचंद ने उन पर यह आरोप लगाया, फिर वामपंथी साहित्यकार तथा सस्ती लोकप्रियता से प्रेरित कुछ साहित्यकारों ने भी उन पर यह आरोप लगाया।

प्रसाद जी के नाटकों में युगीन संघर्षशील भारत जी रहा है। यह कुछ महानुभाव न देख पाए फिर उसके लिए प्रसाद जी को दोषी मानना ठीक नहीं। प्रसाद जी ने ऐतिहासिक कथानकों के माध्यम से स्वाधीनता संग्राम में विषम परिस्थितियों में भी बिना साहस खोये निरंतर जूझते हुए भारतीय योद्धाओं को ही मुख्य स्थान दिया है। इन सबके होते हुए भी ऐसे तमाम समीक्षक थे जिन्होंने खुले हृदय से प्रसाद की रचनाओं का स्वागत किया। "स्कंदगुप्त" भारतीय साहित्य के सर्वश्रेष्ठ जातीय नाटकों में से एक है। स्कंदगुप्त की प्रासंगिकता तब तक रहेगी जब तक स्वतंत्रता युद्ध सफल नहीं हो जाता। चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त नाटक से भी अधिक शक्ति के साथ जातीय भावना को प्रबुद्ध कर अंत में उसको मानवतावादी चेतना में विसर्जित कर दिया।

प्रसाद जी समसामयिक घटनाओं को उठाते हुए भी तात्कालिकता से मुक्त हैं। उदाहरण के लिए दो प्रश्न लें-

पहला भारत का स्वाधीनता संघर्ष तथा दूसरा छुआछूत को मिटाने के प्रयत्न युगीन थे जिन्हें महात्मा गाँधी ने सर्वोपरि माना।

स्वाधीनता का अधिकार अथवा मानव मात्र में साम्य की स्थापना की मांग ऐसे अधिकार हैं जो सभी को मिलने चाहिए। गोरे-काले, नारी-पुरुष, सवर्ण-निम्न वर्ग के आधार पर मानव अधिकारों का हनन प्राचीन काल से होता आया है और

आज भी हो रहा है। इसलिए इनके लिए संघर्ष सदैव आधुनिक रहेंगे, इसलिए प्रसाद जी के नाटक स्वतंत्रता युद्ध के इतिहास के ही नहीं बल्कि मानव संघर्ष के उज्ज्वल अंग हैं जो इतिहास की वस्तु भी हो सकेंगे, जब सभी प्रकार के भेदभाव तथा अन्याय मिटाए जा चुके होंगे। इसी कारण प्रसाद जी के नाटक समय और काल से संबंध रखते हुए भी बंधे हुए नहीं हैं। प्रसाद जी के इस जीवन दर्शन को हम निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं-

अपने में सब कुछ भरकर कैसे व्यक्ति विकास करेगा,

यह एकांत स्वार्थ भीषण है, अपना नाश करेगा।

औरो को हंसते देखो मनु, हंसो और सुख पाओ,

अपने सुख को विस्तृत कर लो, सबको सुखी बनाओ।

जन्मेजय का नागयज्ञ, आर्य-अनार्य संघर्ष उच्च कहलाने वाले वर्गों तथा निम्न कहलाने वाले वर्गों का है, जो भारत में सवर्ण और शूद्र के रूप में आज भी विद्यमान हैं तो वहीं पश्चिमी जगत में काले गोरे के रूप में आज भी विकराल समस्या बनी हुई है। जिन युगीन प्रश्नों को प्रसाद जी ने उद्घाटित किया उनको सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक रूप से बांटकर देखने में सहायता होगी। राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्र की स्वाधीनता संघर्ष और असंख्य युद्ध के लंबे इतिहास के अंत में अत्यंत व्यापक तथा विनाशकारी प्रथम विश्व युद्ध सर्वाधिक ज्वलंत प्रश्न थे। बिना जेल यात्रा किए हुए भी प्रसाद जी ने जिंस राष्ट्रीय चेतना का परिचय दिया वह अधिकांश जेल यात्री राष्ट्र वीरों के कार्यों से भी अधिक मूल्यवान है। स्वाधीन भारत की विदेशनीति के मुख्य तत्व 'पंचशील' की परिकल्पना प्रसाद जी ने अपने नाटक 'चंद्रगुप्त' में बहुत पहले ही दे दी थी जो आज भी भारतीय विदेश नीति-निर्माण के प्रमुख तत्व हैं। मेरी दृष्टि में 'कामना' एक ऐसा नाटक है जिसकी प्रासंगिकता जब तक मनुष्य रहेगा तथा उसके अंदर अर्थलोभ बना रहेगा तब तक बनी रहेगी, जिसमें प्रसाद जी के दर्शन को निम्न पंक्तियों में समझ सकते हैं। वन लक्ष्मी कहती है लीला से-:

अच्छी वस्तु तो उतनी ही है जितने की स्वाभाविक आवश्यकता है। तुम क्यों व्यर्थ अभावों की सृष्टि से जीवन जटिल बना रही हो? जिस प्रकार

ज्वालामुखियाँ पृथ्वी के नीचे दबाकर रखी गई हैं और शीतल स्रोत पृथ्वी के वक्ष स्थल पर बहा दिए गए हैं, उसी प्रकार से सब अभाव 'तारा की संतानों' के कल्याण के लिए गाड़ दिए गए हैं। यह ज्वाला सोने के रूप में सबके हाथों में खेलती और मदिरा के शीतल आवरण से कलेजे में उतर जाती।

आज की युवा पीढ़ी जिस प्रकार से नशे और धन के कारण पतित हुई जाती है उसको प्रसाद जी ने कामना में बहुत सुंदर ढंग से वर्णन किया है तथा हर युग में युवा पीढी के लिए मार्गदर्शन का काम करेगी ही। मानवीय सौहार्द को महत्त्व देने वाले प्रसाद जी ने स्वर्ण व मदिरा को मानव का महान शत्रु बताया है। यह किसी विशेष युग की प्रवृत्ति ना हो कर चिरकालीन है । हर युग में यही मानव सभ्यता के सबसे बड़े शत्रु रहे हैं और आज भी हैं। स्वर्ण, भौतिक सुखों का प्रतीक है। इस प्रकार प्रसाद जी साम्यवाद का प्रचार करते हुए भी भौतिकतावादी नहीं हुए।

स्त्री शक्ति पर विमर्श चिरकालीन प्रश्न हैं, जिसे आज के संदर्भ में देख सकते हैं। जय शंकर प्रसाद जी ने जब साहित्य लेखन प्रारंभ किया उस समय नारी विमर्श समाज सुधारों का एक अभिन्न अंग था नारी की हीन स्थिति को प्रसाद जी ने कभी स्वीकार नहीं किया। उनका संपूर्ण साहित्य नारी की आदर भावना से ओत-प्रोत है, निम्न पंक्तियों के द्वारा-

क्या कहती हो ठहरो नारी, संकल्प अश्रुजल से अपने,

तुम दान कर चुकी पहले ही, जीवन के सोने से सपने।

नारी तुम केवल श्रद्धा हो,विश्वास रजत नग पग तल में,

पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।

प्रसाद जी नारी के द्वारा किए गए बलिदान तथा संपूर्ण समाज में उसके योगदान सबके सामने लाते हैं। भविष्य में जब भी कभी स्त्री विमर्श पर चर्चा होगी प्रसाद जी की इस कविता के बिना पूर्णता को नहीं पाएगी। माता और प्रेयसी दोनों रूपों में नारी गरिमामयी तथा आकर्षक है। 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में प्रसाद जी अपने देश व काल से आगे बढकर पुनर्विवाह का समर्थन करते हैं। इस नाटक

में प्रसाद जी नारी की समस्या को सामाजिक स्तर पर लाकर उसके अधिकारों के विधिसम्मत पक्षों को पुष्ट करते हैं।

निष्कर्ष

अपनी सीमाओं के साथ भी प्रसाद जी हिंदी साहित्य में सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाटककार रहे हैं। शिक्षित समुदाय में वे अत्यंत लोकप्रिय नाटककार रहे हैं। वर्तमान समय में भी प्रसाद के नाटकों के प्रति आकर्षण बना हुआ है। शोधार्थी उनके नाटक पर शोधरत हैं तथा कलाकार उनके नाटकों का मंचन करने के लिए उत्सुक रहते हैं। स्कन्दगुप्त, चंद्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी उनके सर्वाधिक लोकप्रिय नाटक है। तथापि कलात्मक तथा रंगमंच की दृष्टि से अपेक्षाकृत हीन होते हुए भी 'कामना' 'जन्मेजय का नागयज्ञ' तथा 'अजातशत्रु' आधुनिक समस्याओं के प्रति सजगता तथा विशिष्ट दृष्टिकोण के कारण उल्लेखनीय हैं। प्रसाद के विचार वर्तमान संदर्भों में भी सार्थक हैं ।

संदर्भ सामग्री

- प्रसाद के समग्र नाटक- डॉक्टर सत्य प्रकाश मिश्र
- कामना- जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 33
- चंद्रगुप्त- जयशंकर प्रसाद
- कामायनी- जयशंकर प्रसाद
- जयशंकर प्रसाद का नाट्य साहित्य- डॉक्टर भानु देव
- आधुनिक गद्य साहित्य का इतिहास- इग्नू
- समकालीन हिंदी नाट्य काव्य चेतना- डॉक्टर चंद्रशेखर
- हिंदी साहित्य 20 वीं शताब्दी- नंददुलारे वाजपेयी
- भारतेंदु हरिश्चंद्र- मदन गोपाल द्विवेदी
- जयशंकर प्रसाद- नंददुलारे वाजपेयी
- आधुनिक भारत का इतिहास- डॉक्टर विपिन चन्द्र
- नवजागरण और छायावाद- महेन्द्र राय राधा कृष्ण प्रकाशन
- स्वतंत्रता का मुक्ति संग्राम- अयोध्यासिंह उपाध्याय
- महावीरप्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण- रामविलास शर्मा
- हिंदी साहित्य 20 वीं शताब्दी- नन्द दुलारे वाजपेयी
- प्रसाद वाङमय- सत्यप्रकाश मिश्र पृष्ठ संख्या 544
- प्रसाद वाङमय- सत्यप्रकाश मिश्र पृष्ठ संख्या 720
- चिंतामणि भाग दो- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
- हिंदी नाटक का विकास- शिव नाथ
- प्रसाद साहित्य में युग चेतना- डॉक्टर लीलावती गुप्ता
- भारत की प्राचीन संस्कृति- डॉक्टर राम जी उपाध्याय
- अशोक के फूल- हजारी प्रसाद द्विवेदी है।